देवी-स्तुति

राग मारू

(१५)

दुसह दोष-दुख, दलनि, करु देवि दाया।
विश्व-मूलाऽसि, जन-सानुकूलाऽसि, कर शूलधारिणि महामूलमाया॥ १॥
तडित गर्भांग सर्वांग सुन्दर लसत, दिव्य पट भव्य भूषण विराजैं।
बालमृग-मंजु खंजन-विलोचनि, चन्द्रवदनि लखि कोटि रतिमार लाजैं॥ २॥
रूप-सुख-शील-सीमाऽसि, भीमाऽसि, रामाऽसि, वामाऽसि वर बुद्धि बानी।
छमुख-हेरंब-अंबासि, जगदंबिके, शंभु-जायासि जय जय भवानी॥ ३॥
चंड-भुजदंड-खंडनि, बिहंडनि महिष मुंड-मद-भंग कर अंग तोरे।
शुंभ-निःशुंभ कुम्भीश रण-केशरिणि, क्रोध-वारीश अरि-वृन्द बोरे॥ ४॥
निगम-आगम-अगम गुर्वि! तव गुन-कथन, उर्विधर करत जेहि सहसजीहा।
देहि मा, मोहि पन प्रेम यह नेम निज, राम घनश्याम तुलसी पपीहा॥ ५॥

भावार्थ—हे देवि! तुम दुःसह दोष और दुःखोंको दमन करनेवाली हो, मुझपर दया करो। तुम विश्व-ब्रह्माण्डकी मूल (उत्पत्ति स्थान) हो, भक्तोंपर सदा अनुकूल रहती हो, दुष्टदलनके लिये हाथमें त्रिशूल धारण किये हो और सृष्टिकी उत्पत्ति करनेवाली मूल (अव्याकृत) प्रकृति हो॥ १॥ तुम्हारे सुन्दर शरीरके समस्त अंगोंमें बिजली-सी चमक रही है, उनपर दिव्य वस्त्र और सुन्दर आभूषण शोभित हो रहे हैं। तुम्हारे नेत्र मृगछौने और खंजनके नेत्रोंके समान सुन्दर हैं, मुख चन्द्रमाके समान है, तुम्हें देखकर करोड़ों रति और कामदेव लज्जित होते हैं॥ २॥ तुम रूप, सुख और शीलकी सीमा हो; दुष्टोंके लिये तुम भयानक रूप धारण करनेवाली हो। तुम्हीं लक्ष्मी, तुम्हीं पार्वती और तुम्हीं श्रेष्ठ बुद्धिवाली सरस्वती हो। हे जगज्जननि! तुम स्वामिकार्तिकेय और गणेशजीकी माता हो और शिवजीकी गृहिणी हो; हे भवानी! तुम्हारी जय हो, जय हो॥ ३॥ तुम चण्ड दानवके भुजदण्डोंका खण्डन करनेवाली और महिषासुरको मारनेवाली हो, मुण्ड दानवके घमण्डका नाश कर तुम्हींने उसके अंग-प्रत्यंग तोड़े हैं। शुंभ-निशुंभरूपी मतवाले हाथियोंके लिये तुम रणमें सिंहिनी हो। तुमने अपने क्रोधरूपी समुद्रमें शत्रुओंके दल-के-दल डुबो दिये हैं॥ ४॥ वेद, शास्त्र और सहस्र जीभवाले शेषजी तुम्हारा गुणगान करते हैं; परन्तु उसका पार पाना उनके लिये बड़ा कठिन है। हे माता! मुझ तुलसीदासको श्रीरामजीमें वैसा ही प्रण, प्रेम और नेम दो, जैसा चातकका श्याम मेघमें होता है॥ ५॥

राग रामकली

(१६)

जय जय जगजननि देवि सुर-नर-मुनि-असुर-सेवि,
भुक्ति-मुक्ति-दायिनी, भय-हरणि कालिका।
मंगल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्वशर्वरीश-वदनि,
ताप-तिमिर-तरुण-तरणि-किरणमालिका॥ १॥
वर्म, चर्म कर कृपाण, शूल-शेल-धनुषबाण,

धरणि दलनि दानव-दल, रण-करालिका।
पूतना-पिशाच-प्रेत-डाकिनि-शाकिनि-समेत,
भूत-ग्रह-बेताल-खग-मृगालि-जालिका॥ २॥
जय महेश-भामिनी, अनेक-रूप-नामिनी,
समस्त-लोक-स्वामिनी, हिमशैल-बालिका।
रघुपति-पद परम प्रेम, तुलसी यह अचल नेम,
देहु ह्वै प्रसन्न पाहि प्रणत-पालिका॥ ३॥

भावार्थ—हे जगत् की माता! हे देवि!! तुम्हारी जय हो, जय हो। देवता, मनुष्य, मुनि और असुर सभी तुम्हारी सेवा करते हैं। तुम भोग और मोक्ष दोनोंको ही देनेवाली हो। भक्तोंका भय दूर करनेके लिये तुम कालिका हो। कल्याण, सुख और सिद्धियोंकी स्थान हो। तुम्हारा सुन्दर मुख पूर्णिमाके चन्द्रके सदृश है। तुम आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक तापरूपी अन्धकारका नाश करनेके लिये मध्याह्नके तरुण सूर्यकी किरण-माला हो॥ १॥ तुम्हारे शरीरपर कवच है। तुम हाथोंमें ढाल-तलवार, त्रिशूल, साँगी और धनुष-बाण लिये हो। दानवोंके दलका संहार करनेवाली हो, रणमें विकरालरूप धारण कर लेती हो। तुम पूतना, पिशाच, प्रेत और डाकिनी-शाकिनियोंके सहित भूत, ग्रह और बेतालरूपी पक्षी और मृगोंके समूहको पकड़नेके लिये जालरूप हो॥ २॥ हे शिवे! तुम्हारी जय हो। तुम्हारे अनेक रूप और नाम हैं। तुम समस्त संसारकी स्वामिनी और हिमाचलकी कन्या हो। हे शरणागतकी रक्षा करनेवाली! मैं तुलसीदास श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें परम प्रेम और अचल नेम चाहता हूँ, सो प्रसन्न होकर मुझे दो और मेरी रक्षा करो॥ ३॥